International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 186-188

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 186-188
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 20-10-2020
Accepted: 02-12-2020

डा0 वाणी भूषण भट्ट
संस्कृत, विभाग– संस्कृत (शिक्षा विभाग), पद–प्रवक्ता (नव्य व्याकरण), जयभारत साधु महाविद्यालय, हरिद्वार, विश्वविद्यालय– उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

Corresponding Author:
डा0 वाणी भूषण भट्ट
संस्कृत, विभाग– संस्कृत (शिक्षा विभाग), पद–प्रवक्ता (नव्य व्याकरण), जयभारत साधु महाविद्यालय, हरिद्वार, विश्वविद्यालय– उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, भारत

महाकवि कालिदास के साहित्य में वर्णित पर्यावरण पर चिन्तन

डा0 वाणी भूषण भट्ट

प्रस्तावना

प्रकृति अथवा पर्यावरण से हमारा जन्म–जन्मातर का साथ है। इसी की गोद में हम पैदा होते हैं, पलते हैं और भाँति–भाँति के क्रियाकलापों को करते हैं। पर्यावरण के अन्तर्गत सृष्टि की सारी रचनाएँ आ जाती हैं यानि प्रकृति, पेड़–पौधे और प्राणी, साथ ही जल, थल और वायु में चलने वाली हमारी सारी प्रक्रिया भी।

आज के इस वैज्ञानिक युग में पर्यावरण के अध्ययन, परिष्करण एवं अनुकूलन के महत्त्व को किसी भी दृष्टि से अनदेखा नहीं किया जा सकता है। मेरे मस्तिष्क में भी यह प्रश्न उठता था कि आज के इस वर्तमान युग में पर्यावरण का संतुलन इतना बिगड़ता जा रहा है कि इससे न केवल मनुष्य अपितु समस्त प्राणी–जगत, जड़–चेतन पर भी दिन प्रतिदिन बहुत प्रभाव पड़ रहा है। इसका कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है। महानगरों में भी कड़े–कचरे के ढेर लगे रहते हैं, जिसके कारण वातावरण में दुर्गन्ध एवं रोग फैलने का भय रहता है। नगर के समीप खेतों की गन्दी मिट्टी में जो सब्जियाँ उत्पन्न की जाती हैं एवं उपज की बढ़ोत्तरी के लिए जो रासायनिक खाद एवं कीटनाशक औषधियों का उपयोग हो रहा है उसके खाने से अनेक भयानक रोग पनप रहे हैं। कारखानों से रासायनिक पदार्थ निकलने से जल दूषित होता है, फलस्वरूप पेयजल प्राप्त करना कठिन हो गया है। फैक्ट्रियों से धुआँ निकलने से, अन्तरिक्ष में परीक्षण किए जाने से एवं वायुयानों के धुएँ से वायुमण्डल दूषित हो गया है। इस कारण श्वास लेने में भी संकट होता है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या वर्तमान काल में एक जटिल समस्या है।

अधुना प्रकृति तत्त्वों के दोहन होने का हेतु या कारण मानव ही है। मनुष्य धर्मानुकूल न चलकर, प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में जो वर्णित है उस पद्धति को न अपना कर आलस्यमय होकर प्रकृति का शोषण कर रहा है। यदि वर्तमान समय में कालिदास साहित्य में प्रयुक्त पर्यावरण–संरक्षण के अनुसार चलें तो इस प्रदूषित वातावरण का निवारण हो सकता है। भूमि–संरक्षण, वायु–संरक्षण, जल–संरक्षण एवं जीव–जन्तु संरक्षण तथा पशु–पक्षियों का संरक्षण जैसे आन्दोलन भारत में ही नहीं अपितु विश्व में चल रहे है। इन सब का विवेचन इस अध्याय के अन्तिम किया गया है।

इसलिए आधुनिक युग में वृक्षों के महत्त्व को समझकर सारे विश्व में पर्यावरण–शुद्धि के उपायों का प्रयास किया जा रहा हैं। हर प्रकार के लोगों के मन–मस्तिष्क में पर्यावरण–संरक्षण की धरणा को बिठाने का प्रयास हो रहा है। स्थान–स्थान पर वृक्ष–वाटिका एवं वनों को लगाया जा रहा है। प्रत्येक निर्मित स्थान पर संरक्षित सूचित चित्र पट्ट ;बोर्ड लगाए जा रहा है। विद्वान् लोग पत्रिकाओं, आकाशवाणी केन्द्रों एवं दूरदर्शन केन्द्रों से पर्यावरण–संरक्षण सम्बन्धी विचारों को प्रकट करते हैं। पर्यावरण–संरक्षण संस्थाएं विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में जाकर पर्यावरण–संरक्षण के प्रति छात्र–छात्राओं को जागरूक बनाए रखने के लिए भाषण और गोष्ठियों का आयोजन करते हैं। छात्र–छात्राओं को वृक्षारोपण के लिये बंजर स्थानों पर ले जाते हैं, जिससे नागरिक बिगड़ते हुए पर्यावरण को समझ सकें एवं पर्यावरण–संरक्षण में योगदान दे सकें।

महाकवि कालिदास के साहित्य में पर्यावरण एवम् उसके संरक्षण की शिक्षा यह है कि पर्यावरण–संरक्षण सम्बन्धी मानसिक चिन्तन बनाए रखने के लिए अपनी कृतियों में प्रकृति के ातत्त्वों को देवता का रूप देकर उसे शुद्ध रखने के लिए मंगलाचरण की पद्यरचनाएं कीं। गंगा जैसी नदियों को मोक्षकारिणी बताकर एक धारणा बना ली गई। वृक्षों को काटने से पाप और लगाने से पुण्य मिलता है। भूमि को माता के समान और आकाश को पिता के तुल्य बताया गया है। पशु–पक्षियों को देवी–देवताओं के वाहन का प्रतीक माना गया है। इस प्रकार लोगों की मानसिक धारणा बनाए रखने के लिए उस समय महाकवि कालिदास ने कृतियों में ज्ञान के रूप में दर्शाया है–

या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं, या हविर्या च होत्री ।
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषय गुणाः, या स्थिता व्याप्य विश्वम् ।।
यामाहुः सर्वबीज प्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः।
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः ।।

भूमि–संरक्षण

हमारी संस्कृति में भूमि की अत्यधिक महत्ता है। कालिदास साहित्य में वर्णन प्राप्त होता है कि–शिला आदि पदार्थ भूमि ही हैं। पत्थर और धूलि यह भी भूमि ही है। सब पदार्थ भूमि ने धारण किए हैं, इसीसे वे यहाँ स्थिरता से पड़े हैं। महान् समुद्र और मिट्टी से बनी इस पृथिवी को ही समस्त जगत् को बनाने वाले परमेश्वर ने सृष्टि के निमित्त चुना। इस भूमि के द्वारा ही छह ऋतुएँ बनीं। वर्ष और दिन–रात बने। सूर्य और चन्द्र जिसे दोनों मापा करते हैं। इस भूमि पर समुद्र और बहने वाले नाना प्रकार के नदी–नाले और जल उपलब्ध होते हैं, जिस पर अन्न और नाना प्रकार की खेती होती है।

कालिदास के रघुवंश की पुत्रवधूराम की पत्नी सीता को भूमि ने ही जन्म दिया था। माता जिस प्रकार पुत्र को स्वयं प्रेम से दूध पिलाती है उसी प्रकार भूमि–माता पुत्र के लिए अपना जल, अन्न–रस आदि पुष्टिकारक पदार्थ प्रदान करती है। जो अन्न आदि बलकारक पदार्थ शरीर से उत्पन्न होते हैं, हमें उनमें प्रतिष्ठित करती है। सबकी उत्पादक होने के कारण भूमि माता है और हम समस्त देशवासी पुत्रा हैं। हमारी संस्कृति में पृथिवी को कर्म–भूमि कहा गया है। वह भूमि जिस धन की हम कामना करते हैं उसे हमें प्रदान करती है।

कालिदास साहित्य में से यह भी ज्ञान प्राप्त होता है कि जो पृथिवी का संरक्षण या प्रकृति नियमों का विरोध नहीं करते, पृथिवी भी माता की तरह उनका पालन करती है। हिमालय की पुत्राी पार्वती अपने समस्त सुख परित्याग कर शिवजी को पति के रूप में पाने हेतु सब जप तप करने हिमालय में गौरी शिखर में गई थी, तब भी उसका शैया का स्थान केवल मात्र भूमि ही थी। इस प्रकार अनेक श्लोक एवं भाव कालिदास साहित्य में उपलब्ध होते हैं।

आधुनिक काल में भूमि–प्रदूषण होने के अनेकों कारण हैं। जनसंख्या, कारखाना एवं उद्योग आदि भूमि–प्रदूषण का मुख्य कारण है। इसलिए आज के दिन में भूमि कई प्रकार दूषित हुई है जिसके पफलस्वरूप भूमि में अनेक विकार उत्पन्न होने से मनुष्य भूमि–शुद्धता के महत्त्व को समझ गया है। धरती चाहती है कि उसे उजली धूप, शुद्ध वायु, पवित्र जल और तेजमय प्रकाश मिले। वह अपनी कोख को हरा–भरा रखना चाहती है। इसको बनाए रखना हमारा भी तो कुछ कर्त्तव्य है। यही हमें कवियों की कृतियों में प्राप्त होते हैं।

जल–संरक्षण

आदि काल से आर्य संस्कृति में जल का महत्त्व अत्याधिक रहा है। प्रकृति के पाँच तत्त्वों में से 'जल' तत्त्व का होना प्राणियों के लिए अनिवार्य है। इसके बिना जीवन निर्वाह नहीं हो सकता है। प्राचीन काल में कोई भी कर्म या संस्कार सर्वत्र जल–मन्त्र दृष्टिगोचर होते हैं। जहाँ भी मन्त्राों को प्रस्तुत किया जाता है वहाँ जल आवश्यक होता है। जल को उसकी गति, ध्वनी तथा शक्ति के कारण भी चेतन समझा गया है। इसके शुद्धकारी व जीवनदायी प्रभावों से मनुष्य परिचित हो चुका था क्योंकि इसकी शीतलधरा में स्नान करके शुद्धि का अनुभव होता था।

वर्तमान समय में देश में जल–प्रदूषण के कई स्रोत हैं। जैसे कि–

1. मानव समुदाय का मल–मूत्र औद्योगिक कचरे के निकाय से चार गुणा अधिक हानिकारक है। इसमें से अध्कितर निकास जल स्रोतों में बिना उपचार के छोड़ दिए जाते हैं।
2. जल–प्रदूषण का स्रोत औद्योगिक अथवा कृषि योग्य भूमि में नगर–पालिका की नालियों का निकास है।
3. जल–प्रदूषण का कारण भूमि के ऊपर जमा किया गया कच्चा माल, किसी खान का बचा हुआ माल वर्षा द्वारा जल–धरा में प्रवाहित होना है। इस जल–प्रदूषण के कारण बहुत अध्कि संख्या में जलचर भी मर जाते है।
4. खाद का प्रयोग भी जल प्रदूषित करता है।

हम यह भी कह सकते हैं कि वायु–प्रदूषण से जल–प्रदूषण हो सकता है। भूमिगत जल भी प्रदूषण से अछूता नहीं है। भूमि में मल–मूत्र निकास के कारण भूमिगत जल प्रदूषित होता जा रहा है। वर्तमान समय में जल–शुद्ध के महत्त्व का ज्ञान करवाना भावी पीढ़ियों के लिए अनिवार्य है कि जल देवता–रूप है। इसको देवताओं का अनुयायी कहा गया है। कालिदास का रघुवंश महाकाव्य के 13वाँ सर्ग में सगर के पुत्राों का उद्धार के लिए ध्रती पर गंगा का अवतरण का उल्लेख स्वतः प्रमाण सिद्ध है। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' के मंगलाचरण में जल को प्रत्यक्ष आठ देवों में प्रथम स्थान बताया है। यत्रा तत्रा सर्वत्रा ही कालिदास ने जल–संरक्षण की धरणा अपने कृतियों बनाए रखने के लिए जल–महत्त्व के विषय में अनेक वर्णन प्रस्तुत किया, जिसमें गंगा, गोदावरी, ताम्रपर्णी, सिन्धु, सरयू, पम्पासरोवर आदि का वर्णन मिलता है।

अतः अन्त में यही कहना चाहता हूँ कि जल–प्रदूषण से होने वाली समस्याओं के कारण मनुष्य जल–शुद्धता के महत्त्व को समझ रहा है। जल–प्रदूषण को रोकने हेतु आवश्यक है कि उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों, मल–मूत्र आदि को ठिकाने लगाने की व्यवस्था हो। वर्तमान समय में जल की शुद्धि के लिए कई पद्धतियाँ अपनाई जा रही हैं। इनमें से शैवाल जल–प्रदूषण को दूर करने में सहायक है। यह जानवरों को खाने के लिए प्रोटीन देता है। जल–प्रदूषण का नियन्त्राण और रोकथाम और नदी–नालों, कूपों, नालियों व भूमि में जल की स्वच्छता बनी रहे। बाल्यावस्था से ही विद्यार्थी में ऐसी अभिवृत्तियो का विकास करें ताकि वे नदियों, नालों के पानी में गंदगी न डालें। मल–मूत्रा सार्वजनिक स्थान व जलाशय के आसपास न त्यागें। विद्यालयों में 'स्वास्थ्य सप्ताह' मनाया जाए जिसमें व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य व उत्तरदायित्व के विषय में सचेत किया जाए। उत्तराखण्ड सरकार द्वारा भी 'स्पर्श गंगा' अभियान द्वारा गंगा नदी को शुद्ध रखने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है।

वायु–संरक्षण

प्राचीन काल में वायु–प्रदूषण की कोई समस्या नहीं थी, क्योंकि मनुष्य प्रकृति से प्रेम करता था एवं उसके संरक्षण के लिए तत्पर भी रहता था। स्वच्छ वायु के बिना स्वस्थ जीवन नहीं हो सकता। सर्वप्रथम उस समय जनसंख्या इतनी अध्कि नहीं थी कि उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति से दुर्व्यहार करना पड़ता। वायु किसी प्रकार दूषित न हो उसके संरक्षण के लिए ऋषि–मुनियों ने वर्णन किया है यदि मनुष्य के अविनय से उत्पात उत्पन्न हो तो उनके निवारण अर्थात् संरक्षण के लिए राजा शान्ति कराए। विकारयुक्त वायु को अन्तरिक्ष उत्पात कहा जाता है। अन्तरिक्ष उत्पात की शान्ति यज्ञ से की जाती थी। आहुति किए हविष्य को समस्त वायु जल आदि पदार्थ अग्नि के द्वारा ही प्राप्त करते हैं। वायु को उपकारक स्वभाव वाला कहा गया है। यज्ञ पदार्थो को प्रेम से स्वीकार करने का वर्णन किया गया है।

कालिदास की कृतियों में अनेक प्रकार यज्ञों का वर्णन प्राप्त होते हैं। वायु आदि तत्त्वों एवं मनुष्यों की दुष्ट बुद्धि को औषध्यिों के साथ अग्नि में आहुति देकर पवित्र करने का वर्णन उपलब्ध होता है। आहुति को प्राप्त कर वायु, प्राणों को देने वाले वायु को धारण करता है। जहाँ यज्ञ होता है उस स्थान पर कृमियों का नाश हो जाता है एवं वातावरण शुद्ध हो जाता है क्योंकि यज्ञ के धूम से वायु–मण्डल में परिवर्तन आ जाता है। वायु की लहरों में शुद्धता आने से मनुष्य की बुद्धि भी निर्मल होने लगती है।

आज के समय में विश्व की बढ़ती जनसंख्या ने वायुमण्डल को दूषित किया है। विज्ञान की प्रगति से मनुष्य का आकर्षण आवागमन की सुख–सुविधाओं की ओर बढ़ा। साइकिल, रिक्शा, तांगा आदि प्राचीन साध्न समझे जाते हैं। जनसंख्या वृद्धि से आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु औद्योगिकरण हुआ। मानव ने अपने विकास को बिना सोचे–समझे गति प्रदान की। वर्तमान में वन क्षेत्रा एवं वृक्ष लुप्त होते जा रहे हैं। इस प्रकार कालान्तर में वायु–मण्डल और पृथ्वी का ताप बढ़ता जा रहा है। इके कारण ध्रुवीय शिखर पिघलने लगेंगे और समुद्र का जलस्तर बढ़ने लगेगा। परिणामस्वरूप तटवर्ती क्षेत्रा जल में डूब सकते हैं।

वायु प्रदूषण को रोकने के लिए तथा उसके दुष्प्रभाव से पीड़ित को स्वस्थ करने में अग्निहोत्र की अहम् भूमिका ने वैज्ञानिकों स्तब्ध कर दिया है। वे यह कहने लगे जीमतम पे वसनजपवद जव चवससनजपवद यानि अब प्रदूषण को रोकने का उपाय मिल गया है। यूरोप में वाहनों और दुकान पर स्टिगर लगे देखे जाते है। ीमंस जीम जउवेचीमतम चमतवितउ हपदीवजतं अर्थात् अग्निहोत्रा करो, वायु–मण्डल स्वस्थ रखो। अग्निहोत्रा की प्रक्रिया इतनी सरल है कि इससे अध्कि सरल अन्य किसी तकनीक की कल्पना तक नहीं की जा सकती। पांच वर्ष की उम्र का शिशु भी इसे कर सकता है। इसे करने में समय भी बहुत कम लगता है। अग्निहोत्र को हर जाति सम्प्रदाय और वर्ग का व्यक्ति कर सकता है।

वनस्पति–संरक्षण

वनस्पति का प्रचलन वैदिक समय से है। इसका सामान्य अर्थ वनस्पति अर्थात् वन का पति होता है। वनस्पति शब्द सबसे पहले वृक्षों का वाचक था। इसका उपयोग वेदों में व्यापक रूप में मिलता है।

कालिदास के ग्रन्थों में वृक्षादि में अन्तश्चेतना तथा उनमें सुख–दुःख आदि के होने का वर्णन उपलब्ध होता है। रघुवंश महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में कालिदास ने राम के मुख से इस प्रकार वर्णन करते हैं कि–'हे सीते! तुम्हें जिस मार्ग से रावण ले गया था, उस मार्ग की लताएँ मुझे कृपा करके तुम्हारे जाने का मार्ग बतलाना चाहती थीं। किन्तु बोल न सकने के कारण इन्होंने अपनी पत्तों युक्त डालियाँ उधर झुकाकर मुझे तुम्हारा मार्ग बतला दिया था।' ;13/24

पेड़ पौधे अत्यधिक तमोगुण से युक्त एवं भीतर से चेतनायुक्त होने पर भी बाहर किसी से सुख–दुःख प्रकट करने में असमर्थ होते हैं। यदि कोई वृक्ष के मूल पर आघात करे तो यह जीवित रहते हुए रसस्राव करेगा, यदि मध्य और उग्रभाग पर आघात करे तो भी यह जीवित रहते हुए ही रसस्राव करेगा। वृक्ष जीव आत्मा से ओत–प्रोत होते हुए जलपान करता हुआ आनन्दपूर्वक रहता है।

हमारे देश में वृक्षों की उपयोगिता सभी कालों में पाई गई है। वृक्ष अपने हरित पत्राांकों में पक्षियों को शीतल एवं उष्ण नींद देते हैं। वृक्ष अपने पफूलों से देवताओं का, पफलों से पितरों का और छाया से अतिथियों का पूजन करते हैं। किन्नर, नाग, राक्षस, देव, गन्धर्व, मनुष्य और ऋषि भी वृक्षों का आश्रय लेते हैं।

कालिदास के ग्रन्थों से अनुमान लगाया जा सकता है भारतीयों का वनस्पति जगत् से घनिष्ठ प्रेम एवं सम्पर्क था। गांव तथा अरण्य के भेद पौधे के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। इससे यह प्रतीत होता है कि वृक्षों की मानव समाज को बड़ी देन है। वृक्ष जीवन के लिए वर्षा को आमन्त्रित करते हैं। कालिदास ने शकुंतला के माध्यम से प्रकृति से प्रेम का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है–

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्येव कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सव
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।

कालिदास साहित्य से प्रतीत होता है कि पशु–पालन एवं कृषि आर्यो के प्रमुख व्यवसाय थे। कृषि–कार्य की अपेक्षा पशुपालन की महत्ता अध्कि थी। पशु उनकी सम्पत्ति तथा समृद्धि के प्रतीक थे। कालिदास के ग्रन्थों में गाय के प्रति असंख्य संकेत प्राप्त होते हैं– चरवाहे गायों का ध्यान रखता है तथा घर सुरक्षित वापस लाता है। गौएं शुद्ध जलपान करें, उत्तम घास खाएं, राजा उनकी रक्षा का प्रबन्ध करें और चोर, हत्यारों और हत्या करने के लिए दूसरों को प्रेरित करने वालों को अपने पास गाय रखने का अधिकार न हो। रघुवंश महाकाव्य के द्वितीय सर्ग से ज्ञात होता है कि–गो–सेवा का धर्म राजा दिलीप से अधिक कौन पालन कर सकता है। कालिदास के युग में पशुओं के संरक्षण–सम्बंधी धार्मिक योजनाएं मिलती हैं। गौओं का धार्मिक महत्त्व अतिशय बढ़ा और गोधन की सर्वश्रेष्ठ धन के रूप में प्रतिष्ठा हुई। प्रकृति और पशु–पक्षी जगत् मानव के पड़ोसी ही नहीं, उसके अभिन्न सखा–सहचर भी थे। उपयोगिता की दृष्टि से पशु को परम धन कहा गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थाः–

1. पूर्व मेघः
2. कुमार सम्भवः
3. अभिज्ञान शाकुन्तलम्